आँसू के इस दूसरे संस्करण में, छन्दों का क्रम, कुछ बदल दिया गया है। कुछ छन्द और भी जोड़ दिये गये, जो पहले संस्करण के बाद लिखे गये थे।

—प्रकाशक

आंसू

इस करुणा कलित हृदय में
अब विकल रागिनी बजती
क्यों हाहाकार स्वरों में
वेदना असीम गरजती ?

आँसू

मानस-सागर के तट पर
क्यों लोल लहर की घातें
कल-कल ध्वनि से हैं कहतीं
कुछ विस्मृत बीती बातें ?

आती है शून्य क्षितिज से
क्यों लौट प्रतिध्वनि मेरी
टकराती बिलखाती सी
पगली सी देती फेरी ?

क्यों व्यथित व्योम-गंगा सी
छिटका कर दोनों छोरें
चेतना - तरङ्गिनि मेरी
लेती है मृदुल हिलोरें

बस गई एक बस्ती है
स्मृतियों की इसी हृदय में
नक्षत्र-लोक फैला है
जैसे इस नील निलय में।

ये सब स्फुलिङ्ग हैं मेरी
इस ज्वालामयी जलन के
कुछ शेष चिन्ह हैं केवल
मेरे उस महा मिलन के।

शीतल ज्वाला जलती है
ईंधन होता दृग-जल का
यह व्यर्थ साँस चल-चल कर
करती है काम अनिल का।

वाडवज्वाला सोती थी
इस प्रणय-सिंधु के तल में
प्यासी मछली-सी आँखें
थीं विकल-रूप के जल में।

बुलबुले सिन्धु के फूटे
नक्षत्र - मालिका टूटी
नभ-मुक्त-कुन्तला धरणी
दिखलाई देती लूटी।

आँसू

छिल-छिल कर छाले फोड़े
मल-मल कर मृदुल चरण से
धुल-धुल कर वह रह जाते
आँसू करुणा के कण से।

इस विकल वेदना को ले
किसने सुख को ललकारा
वह एक अबोध अकिञ्चन
बेसुध चैतन्य हमारा।

अभिलाषाओं की करवट
फिर सुप्त व्यथा का जगना
सुख का सपना हो जाना
भींगी पलकों का लगना।

इस हृदय-कमल का घिरना
अलि-अलकों की उलझन में
आँसू-मरन्द का गिरना
मिलना निश्वास-पवन में।

मादक थी मोहमयी थी
मन बहलाने की क्रीड़ा
अब हृदय हिला देती है
वह मधुर प्रेम की पीड़ा।

सुख आहत शान्त उमंगें
बेगार साँस ढोने में
यह हृदय समाधि बना है
रोती करुणा कोने में।

चातक की चकित पुकारें
श्यामा - ध्वनि सरल रसीली
मेरी करुणार्द्र - कथा की
टुकड़ी आँसू से गीली ।

बेसुध जो अपने सुख से
जिनकी हैं सुप्त व्यथायें
अवकाश भला है किनको
सुनने को करुण कथायें ।

आँसू

जीवन की जटिल समस्या
है वढ़ी जटा सी कैसी
उड़ती है धूल हृदय में
किसकी विभूति है ऐसी ?

जो घनीभूत पीड़ा थी
मस्तक में स्मृति सी छाई
दुर्दिन में आँसू वनकर
वह आज वरसने आई।

मेरे क्रन्दन में वजती
क्या वीणा ?—जो सुनते हो
धागों से इन आँसू के
निज करुणा-पट वुनते हो।

रो-रो कर सिसक-सिसक कर
कहता मैं करुण-कहानी
तुम सुमन नोचते सुनते
करते जानी अनजानी

मैं बल खाता जाता था
मोहित बेसुध बलिहारी
अन्तर के तार खिंचे थे
तीखी थी तान हमारी।

झंझा झकोर गर्जन था
बिजली थी, नीरद माला
पाकर इस शून्य हृदय को
सबने आ डेरा डाला।

आँसू

घिर जातीं प्रलय घटायें
कुटिया पर आकर मेरी
तम-चूर्ण बरस जाता था
छा जाती अधिक अँधेरी।

बिजली माला पहने फिर
मुसक्याता सा आँगन में
हाँ, कौन बरस जाता था
रस-बूँद हमारे मन में ?

तुम सत्य रहे चिर सुन्दर
मेरे इस मिथ्या जग के
थे केवल जीवन-संगी
कल्याण कलित इस मग के ।

कितनी निर्जन रजनी में
तारों के दीप जलाये
स्वर्गङ्गा की धारा में
उज्ज्वल उपहार चढ़ाये !

गौरव था, नीचे आये
प्रियतम मिलने को मेरे
मैं इठला उठा अकिञ्चन,
देखे ज्यों स्वप्न सवेरे ।

मधु राका मुसक्याती थी
पहले देखा जब तुमको
परिचित-से जाने कब के
तुम लगे उसी क्षण हमको !

परिचय राका जलनिधि का
जैसे होता हिमकर से
ऊपर से किरणें आतीं
मिलती हैं गले लहर से।

मैं अपलक इन नयनों से
निरखा करता उस छवि को
प्रतिभा डाली भर लाता
कर देता दान सुकवि को।

निर्झर-सा झिर-झिर करता
माधवी-कुञ्ज छाया में
चेतना बही जाती थी
हो मन्त्र-मुग्ध माया में।

पतझड़ था, झाड़ खड़े थे
सूखी सी फुलवारी में
किसलय नव कुसुम बिछाकर
आये तुम इस क्यारी में !

शशि - मुख पर घूँघट डाले
अंचल में दीप छिपाये
जीवन की गोधूली में
कौतूहल से तुम आये !

घन में सुन्दर बिजली - सी
बिजली में चपल चमक-सी
आँखों में काली पुतली
पुतली में श्याम झलक सी।

प्रतिमा में सजीवता सी
बस गई सुछवि आँखों में
थी एक लकीर हृदय में
जो अलग रही लाखों में।

माना कि रूप - सीमा है
सुन्दर ! तव चिर यौवन में
पर समा गये थे, मेरे
मन के निस्सीम गगन में !

लावण्य - शैल राई सा
जिस पर वारी बलिहारी
उस कमनीयता कला की
सुषमा थी प्यारी - प्यारी।

बाँधा था विधु को किसने
इन काली जंजीरों से
मणि वाले फणियों का मुख
क्यों भरा हुआ हीरों से ?

काली आँखों में कितनी
यौवन के मद की लाली
मानिक – मदिरा से भर दी
किसने नीलम की प्याली।

तिर रही अतृप्ति जलधि में
नीलम की नाव निराली
काला – पानी वेला सी
है अंजन – रेखा काली ।

अंकित कर क्षितिज–पटी को
तूलिका बरौनी तेरी
कितने घायल हृदयों की
बन जाती चतुर चितेरी

कोमल कपोल पाली में
सीधी सादी स्मित – रेखा
जानेगा वही कुटिलता
जिसने भौं में बल देखा ।

विद्रुम सीपी सम्पुट में
मोती के दाने कैसे ?
है हंस न, शुक यह, फिर क्यों
चुगने को मुक्ता ऐसे ?

विकसित सरसिज-वन वैभव
मधु - ऊषा के अंचल में
उपहास करावे अपना
जो हंसी देख ले पल में !

मुख - कमल समीप सजे थे
दो किसलय से पुरइन के
जल विन्दु सदृश ठहरे कब
उन कानों में दुख किनके ?

थी किस अनङ्ग के धनु की
वह शिथिल शिंजिनी दुहरी
अलबेली बाहुलता या
तनु छवि-सर की नव लहरी ?

चंचला स्नान कर आवे
चंद्रिका पर्व में जैसी
उस पावन तन की शोभा
आलोक मधुर थी ऐसी !

छलना थी, तब भी मेरा
उसमें विश्वास घना था
उस माया की छाया में
कुछ सच्चा स्वयं बना था।

आँसू

वह रूप रूप था केवल
या हृदय रहा भी उसमें
जड़ता की सब माया थी
चैतन्य समझ कर मुझमें।

मेरे जीवन की उलझन
बिखरी थीं उनकी अलकें
पी ली मधु मदिरा किसने
थी बन्द हमारी पलकें?

ज्यों ज्यों उलझन बढ़ती थी
बस शान्ति विहँसती बैठी
उस बन्धन में सुख बँधता
करुणा रहती थी ऐंठी।

हिलते द्रुम-दल कल किसलय
देती गलबाँही डाली
फूलों का चुम्बन, छिड़ती—
मधुपों की तान निराली।

मुरली मुखरित होती थी
मुकुलों के अधर विहँसते
मकरन्द भार से दब कर
श्रवणों में स्वर जा बसते।

परिरम्भ कुम्भ की मदिरा
निश्वास मलय के झोंके
मुख - चन्द्र चाँदनी जल से
मैं उठता था मुँह धोके!

थक जाती थी सुख रजनी
मुख - चन्द्र हृदय में होता
श्रम - सीकर सदृश नखत से
अम्बर पट भींगा होता।

सोयेगी कभी न वैसी
फिर मिलन कुञ्ज में मेरे
चाँदनी शिथिल अलसाई
सुख के सपनों से मेरे

आँसू

लहरों में प्यास भरी है
है भँवर पात्र भी खाली
मानस का सब रस पीकर
लुढ़का दी तुमने प्याली।

किञ्जल्क जाल हैं बिखरे
उड़ता पराग है रूखा
है स्नेह सरोज हमारा
विकसा, मानस में सूखा।

छिप गईं कहा छूकर वे
मलयज की मृदुल हिलोरें
क्यों घूम गई हैं आकर
करुणा - कटाक्ष की कोरें ।

विस्मृति है, मादकता है
मूर्च्छना भरी है मन में
कल्पना रही, सपना था
मुरली बजती निर्जन में ।

आँसू

हीरे - सा हृदय हमारा
कुचला शिरीष कोमल ने
हिम शीतल प्रणय अनल बन
अब लगा विरह से जलने ।

अलियों से आँख बचा कर
जब कुञ्ज संकुचित होते
धुँधली, सन्ध्या, प्रत्याशा
हम एक - एक को रोते ।

जल उठा स्नेह, दीपक सा,
नवनीत हृदय था मेरा
अब शेष धूम - रेखा से
चित्रित कर रहा अँधेरा ।

नीरव मुरली, कलरव चुप
अलिकुल थे बन्द नलिन में
कालिन्दी वही प्रणय की
इस तममय हृदय पुलिन में।

कुसुमाकर रजनी के जो
पिछले पहरों में खिलता
उस मृदुल शिरीष सुमन-सा
मैं प्रात धूल में मिलता।

व्याकुल उस मधु सौरभ से
मलयानिल धीरे धीरे
निश्वास छोड़ जाता है
अब विरह तरङ्गिनि तीरे।

आँसू

चुम्बन अंकित प्राची का
पीला कपोल दिखलाता
मैं कोरी आँख निरखता
पथ, प्रात समय सो जाता।

श्यामल अंचल धरणी का
भर मुक्ता आँसू कन से
छूँछा बादल बन आया
मैं प्रेम प्रभात गगन से।

विष प्याली जो पी ली थी
वह मदिरा बनी नयन में
सौन्दर्य पलक प्याले का
अब प्रेम बना जीवन में।

कामना – सिन्धु लहराता
छवि पूरनिमा थी छाई
रतनाकर बनी चमकती
मेरे शशि की परछाई

छायानट छवि परदे में
सम्मोहन वेणु बजाता
सन्ध्या कुहुकिनि अञ्चल में
कौतुक अपना कर जाता।

मादकता से आये तुम
संज्ञा से चले गये थे
हम व्याकुल पड़े बिलखते
थे, उतरे हुए नशे से।

आँसू

अम्बर असीम अन्तर में
चञ्चल चपला से आ
अब इन्द्रधनुष सी आ
तुम छोड़ गये हो जाक

मकरन्द मेघ – माला - सी
वह स्मृति मदमाती आती
इस हृदय विपिन की कलिका
जिसके रस से मुसक्याती।

है हृय शिशिरकण पूरित
मधु वर्षा से शशि तेरी
मन – मन्दिर पर बरसाता
कोई मुक्ता की ढेरी !

शीतल समीर आता है
कर पावन परस तुम्हारा
मैं सिहर उठा करता हूँ
बरसा कर आँसू-धारा।

मधु मालतियाँ सोती हैं
कोमल उपधान सहारे
मैं व्यर्थ प्रतीक्षा लेकर
गिनता अम्बर के तारे।

निष्ठुर! यह क्या, छिप जाना?
मेरा भी कोई होगा
प्रत्याशा विरह-निशा की
हम होंगे औ' दुख होगा।

जब शान्त मिलन सन्ध्या को
हम हेम जाल पहनाते
काली चादर के स्तर का
खुलना न देखने पाते ।

अब छुटता नहीं छुड़ाये
रँग गया हृदय है ऐसा
आँसू से धुला निखरता
यह रंग अनोखा कैसा ।

आँसू

कामना कला की विकसी
कमनीय मूर्ति बन तेरी
खिंचती है हृदय पटल पर
अभिलाषा बन कर मेरी।

मणि-दीप लिये निज कर में
पथ दिखलाने को आये
वह पावक पुञ्ज हुआ अब
किरनों की लट बिखराये।

चढ़ गई और भी ऊँची
रूठी करुणा की वीणा
दीनता दर्प बन बैठी
साहस से कहती पीड़ा।

यह तीव्र हृदय की मदिरा
जी भर कर—छक कर मेरी
अब लाल आँख दिखला कर
मुझको ही तुमने फेरी ।

नाविक ! इस सूने तट पर
किन लहरों में खे लाया
इस बीहड़ वेला में क्या
अब तक था कोई आया ?

उस पार कहाँ फिर जाऊँ
तम के मलीन अञ्चल में
जीवन का लोभ नहीं, वह
वेदना छद्म मय छल में ।

प्रत्यावर्तन के पथ में
पद - चिन्ह न शेष रहा है
डूबा है हृदय मरुस्थल
आँसू नद उमड़ रहा है।

अवकाश शून्य फैला है
है शक्ति न और सहारा
अपदार्थ तिरूँगा मैं क्या
हो भी कुछ कूल किनारा।

तिरती थी तिमिर उदधि में
नाविक! यह मेरी तरणी
मुख चन्द्र किरण से खिंच कर
आती समीप हो धरणी।

सूखे सिकता सागर में
यह नैया मेरे मन की
आँसू की धार बहा कर
खे चला प्रेम बेगुन की।

यह पारावार तरल हो
फेनिल हो गरल उगलता
मथ डाला किस तृष्णा से
तल में बड़वानल जलता।

निश्वास मलय में मिलकर
छाया पथ छू आयेगा
अन्तिम किरणें बिखरा कर
हिमकर भी छिप जायेगा।

आँसू

चमकूँगा धूल कणों में
सौरभ हो उड़ जाऊँगा
पाऊँगा कहीं तुम्हें तो
ग्रह - पथ में टकराऊँगा

इस यान्त्रिक जीवन में क्या
ऐसी थी कोई क्षमता
जगती थी ज्योति भरी सी
तेरी सजीवता ममता।

है चन्द्र हृदय में बैठा
उस शीतल किरण सहारे
सौन्दर्य सुधा बलिहारी
चुगता चकोर अंगारे।

बलने का सम्बल लेकर
दीपक पतंग से मिलता
जलने की दीन दशा में
वह फूल सदृश हो खिलता !

इस गगन यूथिका वन में
तारे जूही से खिलते
सित शतदल से शशि तुम क्यों
उनमें जाकर हो मिलते ?

मत कहो कि यही सफलता
कलियों के लघु जीवन की
मकरन्द भरी खिल जायें
तोड़ी जायें वेमन की।

यदि दो घड़ियों का जीवन
कोमल वृन्तों में बीते
कुछ हानि तुम्हारी है क्या
चुपचाप चू पड़े जीते !

सब सुमन मनोरथ अञ्जलि
बिखरा दी इन चरणों में
कुचलो न कीट सा, इनके
कुछ हैं मकरन्द कणों में।

निर्मोह काल के काले
पट पर कुछ अस्फुट लेखा
सब लिखी पड़ी रह जाती
सुख दुख मय जीवन रेखा।

आँसू

दुख सुख में उठता गिरता
संसार तिरोहित होगा ।
मुड़ कर न कभी देखेगा
किसका हित अनहित होगा ।

मानव जीवन वेदी पर
परिणय हो विरह मिलन का
दुख सुख दोनों नाचेंगे
है खेल आँख का मन का ।

इतना सुख ले पल भर में
जीवन के अन्तस्तल से
तुम खिसक गये धीरे से
रोते अब प्राण विकल से।

क्यों छलक रहा दुख मेरा
ऊषा की मृदु पलकों में
हाँ! उलझ रहा सुख मेरा
सन्ध्या की घन अलकों में।

आँसू

लिपटे सोते थे मन में
सुख दुख दोनों ही ऐसे
चन्द्रिका अँधेरी मिलती
मालती कुञ्ज में जैसे

अवकाश असीम सुखों से
आकाश तरंग बनाता
हँसता सा छाया-पथ में
नक्षत्र समाज दिखाता

नीचे विपुला धरणी है
दुख भार वहन सी करती
अपने खारे आँसू से
करुणा सागर को भरती ।

धरणी दुख माँग रही है
आकाश छीनता सुख को
अपने को देकर उनको
हूँ देख रहा उस सुख को ।

इतना सुख जो न समाता
अन्तरिक्ष में, जल - थल में
उनकी मुट्ठी में बन्दी
था आश्वासन के छल में ।

दुख क्या था, उनको मेरा
जो सुख लेकर यों भागे
सोते में चुम्बन लेकर
जब रोम तनिक सा जागे ।

सुख मान लिया करता था
जिसका दुख था जीवन में
जीवन में मृत्यु बसी है
जैसे बिजली हो घन में ।

उनका सुख नाच उठा है
यह दुख-द्रुम-दल हिलने से
शृङ्गार चमकता उनका
मेरी करुणा मिलने से ।

हो उदासीन दोनों से
दुख सुख से मेल करायें
ममता की हानि उठाकर
दो रूठे हुए मनायें

चढ़ जाय अनन्त गगन पर
वेदना जलद की माला
रवि तीव्र ताप न जलाये
हिमकर का हो न उजाला।

नचती है नियति नटी सी
कन्दुक क्रीड़ा सी करती
इस व्यथित विश्व आँगन में
अपना अतृप्त मन भरती।

विभ्रम मदिरा से उठकर
आओ तम मय अन्तर में
पाओगे कुछ न, टटोलो
अपने बिन सूने घर में।

सुख मान लिया करता था
जिसका दुख था जीवन में
जीवन में मृत्यु वसी है
जैसे बिजली हो घन में ।

उनका सुख नाच उठा है
यह दुख-द्रुम-दल हिलने से
शृङ्गार चमकता उनका
मेरी करुणा मिलने से ।

हो उदासीन दोनों से
दुख सुख से मेल करायें
ममता की हानि उठाकर
दो रूठे हुए मनायें

चढ़ जाय अनन्त गगन पर
वेदना जलद की माला
रवि तीव्र ताप न जलाये
हिमकर का हो न उजाला।

नचती है नियति नटी सी
कन्दुक क्रीड़ा सी करती
इस व्यथित विश्व आँगन में
अपना अतृप्त मन भरती।

विभ्रम मदिरा से उठकर
आओ तम मय अन्तर में
पाओगे कुछ न, टटोलो
अपने बिन सूने घर में।

इस शिथिल आह से खिंच कर
तुम आओगे,—आओगे
इस बढ़ी व्यथा को मेरी
रो रो कर अपनाओगे।

सन्ध्या की मिलन प्रतीक्षा
कह चलती कुछ मनमानी
ऊषा की रक्त निराशा
कर देती अन्त कहानी।

वेदना विकल फिर आई
मेरी चौदहो भुवन में
सुख कहीं न दिया दिखाई
विश्राम कहाँ जीवन में ?

उच्छ्वास और आँसू में
विश्राम थका सोता है
रोई आँखों में निद्रा
बनकर सपना होता है।

निशि, सो जावें जब उर में
ये हृदय व्यथा आभारी
उनका उन्माद सुनहला
सहला देना सुखकारी ।

तुम स्पर्श हीन अनुभव सी
नन्दन तमाल के तल से
जग छा दो श्याम-लता सी
तन्द्रा पल्लव विह्वल से ।

सपनों की सोनजुही सब
बिखरें, ये बनकर तारा
सित - सरसिज से भर जावे
वह स्वर्गङ्गा की धारा ।

नीलिमा शयन पर बैठी
अपने नभ के आँगन में
विस्मृति का नील नलिन रस
बरसो अपाङ्ग के घन से।

चिर दग्ध दुखी यह वसुधा
आलोक माँगती तब भी
तम तुहिन बरस दो कन-कन
यह पगली सोए अब भी।

विस्मृति समाधि पर होगी
वर्षा कल्याण जलद की
सुख सोये थका हुआ सा
चिन्ता छुट जाय विपद की।

चेतना लहर न उठेगी
जीवन समुद्र थिर होगा
सन्ध्या हो स्वर्ग प्रलय की
विच्छेद मिलन फिर होगा।

रजनी की रोई आँखें
आलोक विन्दु टपकातीं
तम की काली छलनायें
उनको चुप-चुप पी जातीं।

सुख अपमानित करता सा
जब व्यंग हँसी हँसता है
चुपके से तब मत रो तू
यह कैसी परवशता है ?

आँसू

अपने आँसू की अञ्जलि
आँखों में भर क्यों पीता
नक्षत्र पतन के क्षण में
उज्ज्वल होकर है जीता!

यह हँसी और यह आँसू
घुलने दे—मिल जाने दे
बरसात नई होने दे
कलियों को खिल जाने दे।

चुन-चुन ले रे कन-कन से
जगती की सजग व्यथायें
रह जायेंगी कहने को
जन-रञ्जन-करी कथायें।

जब नील निशा अञ्चल में
हिमकर थक सो जाते हैं
अस्ताचल की घाटी में
दिनकर भी खो जाते हैं।

नक्षत्र डूब जाते हैं
स्वर्गङ्गा की धारा में
बिजली बन्दी होती जब
कादम्बिनि की कारा में।

मणिदीप विश्व - मन्दिर की
पहने किरणों की माला
तुम एक अकेली तब भी
जलती हो मेरी ज्वाला !

उत्ताल - जलधि - वेला में
अपने सिर शैल उठाये
निस्तब्ध गगन के नीचे
छाती में जलन छिपाये ।

संकेत नियति का पाकर
तम से जीवन उलझाये
जब सोती गहन गुफा में
चंचल लट को छिटकाये ।

वह ज्वालामुखी जगत की
वह विश्व - वेदना - वाला
तब भी तुम सतत अकेली
जलती हो मेरी ज्वाला !

इस व्यथित विश्व पतझड़ की
तुम जलती हो मृदु होली
हे अरुणे ! सदा सुहागिनि
मानवता सिर की रोली !

जीवन सागर में पावन
वड़वानल की ज्वाला सी
यह सारा कलुष जलाकर
तुम जलो अनल बाला सी ।

जगद्वन्द्वों के परिणय की
हे सुरभिमयी जयमाला
किरणों के केसर रज से
भव भर दो मेरी ज्वाला !

तेरे प्रकाश में चेतन—
संसार वेदना वाला
मेरे समीप होता है
पाकर कुछ करुण उजाला ।

उसमें धुंधली छायायें
परिचय अपना देती हैं
रोदन का मूल्य चुकाकर
सब कुछ अपना लेती हैं ।

आँसू

निर्मम जगती को तेरा
मङ्गलमय मिले उजाला
इस जलते हुये हृदय की
कल्याणी शीतल ज्वाला ?

जिसके आगे पुलकित हो
जीवन है सिसकी भरता
हाँ मृत्यु नृत्य करती है
मुसक्याती खड़ी अमरता।

यह मेरे प्रेम विहँसते
जागो, मेरे मधुवन में
फिर मधुर भावनाओं का
कलरव हो इस जीवन में।

आँसू

मेरी आहों में जागो
सुस्मित में सोने वाले
अधरों से हँसते हँसते
आँखों से रोने वाले ।

इस स्वप्नमयी संसृति के
सच्चे जीवन तुम जागो
मंगल किरणों से रञ्जित
मेरे सुन्दर तम जागो ।

अभिलाषा के मानस में
सरसिज सी आँखें खोलो
मधुपों से मधु गुञ्जारो
कल-रव से फिर कुछ बोलो ।

आशा का फैल रहा है
यह सूना नीला अंचल
फिर स्वर्ण-सृष्टि सी नीचे
उसमें करुणा हो चंचल।

मधु-संसृति की पुलकावलि
जागो, अपने यौवन में
फिर से मरन्द-उद्गम हो
कोमल कुसुमों के वन में।

फिर विश्व माँगता होवे
ले नभ की खाली प्याली
तुम से सुख मधु की बूँदें
पीड़ा लेने को लाली।

फिर तम प्रकाश झगड़े में
नवज्योति विजयिनी होती
हँसता यह विश्व हमारा
बरसाता मञ्जुल मोती।

प्राची के अरुण मुकुर में
सुन्दर प्रतिबिम्ब तुम्हारा
उस अलस उषा में देखूँ
अपनी आँखों का तारा।

कुछ रेखाएँ हों ऐसी
जिनमें आकृति हो उलझी
तब एक झलक! वह कितनी
मधुमय रचना हो सुलझी।

आँसू

जिसमें इतराई फिरती
नारी - निसर्ग - सुन्दरता
छलकी पड़ती हो जिसमें
शिशु की उर्मिल निर्मलता

आँखों का निधि वह मुख हो
अवगुण्ठन नील गगन सा
यह शिथिल हृदय ही मेरा
खुल जावे स्वयं मगन सा।

मेरी मानस पूजा का
पावन प्रतीक अविचल हो

कल्पना अखिल जीवन की
किरनों से दृग तारा की
अभिषेक करे प्रतिनिधि बन
आलोकमयी धारा की।

वेदना मधुर हो जावे
मेरी निर्दय तन्मयता
मिल जावे आज हृदय को
पाऊँ मैं भी सहृदयता।

मेरी अनामिका संगिनि!
सुन्दर कठोर कोमलते!
हम दोनों रहें सखा ही
जीवन पथ चलते चलते।

आँसू

जिसमें इतराई फिरती
नारी - निसर्ग - सुन्दरता
छलकी पड़ती हो जिसमें
शिशु की उर्मिल निर्मलता

आँखों का निधि वह मुख हो
अवगुण्ठन नील गगन सा
यह शिथिल हृदय ही मेरा
खुल जावे स्वयं मगन सा।

मेरी मानस पूजा का
पावन प्रतीक अविचल हो
झरता अनन्त यौवन मधु
अम्लान स्वर्ण - शतदल हो।

कल्पना अखिल जीवन की
किरनों से दृग तारा की
अभिषेक करे प्रतिनिधि बन
आलोकमयी धारा की।

वेदना मधुर हो जावे
मेरी निर्दय तन्मयता
मिल जावे आज हृदय को
पाऊँ मैं भी सहृदयता।

मेरी अनामिका संगिनि!
सुन्दर कठोर कोमलते!
हम दोनों रहें सखा ही
जीवन पथ चलते चलते।

जैसे सरिता के तट पर
जो जहाँ खड़ा रहता है
विधु का आलोक तरल पथ
सम्मुख देखा करता है ।

जागरण तुम्हारा त्यों ही
देकर अपनी उज्ज्वलता
इन छोटी बूँदों से भी
हर लेता सब पंकिलता ।

इस छोटी सी सीपी में
रत्नाकर खेल रहा हो
करुणा की इन बूँदों में
आनन्द उडेल रहा हो ।

आँसू

मेरे जीवन का जलनिधि
बन अंधकार ऊर्मिल हो
आकाश दीप सा तव वह
तेरा प्रकाश झिलमिल हो।

हैं पड़ी हुई मुँह ढँक कर
मन की जितनी पीड़ायें
वे हँसने लगें सुमन सी
करती कोमल क्रीड़ायें।

तेरा आलिंगन कोमल
मृदु अमर-वेलि सा फैले
धमनी के इस बंधन में
जीवन ही न हो अकेले।

आँसू

जैसे सरिता के तट पर
जो जहाँ खड़ा रहता है
विधु का आलोक तरल पथ
सम्मुख देखा करता है ।

जागरण तुम्हारा त्यों ही
देकर अपनी उज्ज्वलता
इन छोटी बूँदों से भी
हर लेता सब पंकिलता ।

इस छोटी सी सीपी में
रत्नाकर खेल रहा हो
करुणा की इन बूँदों में
आनन्द उडेल रहा हो ।

मेरे जीवन का जलनिधि
बन अंधकार ऊर्मिल हो
आकाश दीप सा तब वह
तेरा प्रकाश झिलमिल हो।

हैं पड़ी हुई मुँह ढँक कर
मन की जितनी पीड़ायें
वे हँसने लगें सुमन सी
करती कोमल क्रीड़ायें।

तेरा आलिंगन कोमल
मृदु अमर-वेलि सा फैले
धमनी के इस बंधन में
जीवन ही न हो अकेले।

हे जन्म-जन्म के जीवन
साथी संसृति के दुख में
पावन प्रभात हो जावे
जागो आलस के सुख में।

जगती का कलुष अपावन
तेरी विदग्धता पावे
फिर निखर उठे निर्मलता
यह पाप पुण्य हो जावे।

सपनों की सुख छाया में
जब तन्द्रालस संसृति है,
तुम कौन सजग हो आई
मेरे मन में विस्मृति है।

तुम! अरे, वही हाँ तुम हो
मेरी चिर - जीवन - संगिनि
दुख वाले दग्ध हृदय की
वेदने! अश्रुमयि रङ्गिनि!

आँसू

जब तुम्हें भूल जाता हूँ
कुड्मल किसलय के छल में
तब कूक हूक सी बन तुम
आ जाती रंगस्थल में ।

बतला दो अरे, न हिचको
क्या देखा शून्य गगन में
कितना पथ हो चल आई
रजनी के मृदु निर्जन में ।

सुख तृप्त - हृदय कोने को
ढकती तम - श्यामल छाया
मधु स्वप्निल ताराओं की
जब चलती अभिनय माया ।

देखा तुमने तब रुक कर
मानस कुमुदों का रोना
शशि किरणों का हँस-हँस कर
मोती मकरन्द पिरोना ।

देखा बौने जलनिधि का
शशि छूने को ललचाना
वह हाहाकार मचाना
फिर उठ-उठ कर गिर जाना ।

मुँह सिये झेलतीं अपनी
अभिशाप ताप ज्वालायें
देखी अतीत के युग से
चिर-मौन शैल मालायें ।

आँसू

जिनपर न वनस्पति कोई
श्यामल उगने पाती हैं
जो जनपद - परस-तिरस्कृत
अभिशप्त कही जाती हैं।

कलियों को उन्मुख देखा
सुनते वह कपट कहानी
फिर देखा उड़ जाते भी
मधुकर को कर मनमानी।

फिर उन निराश नयनों की
जिनके आँसू सूखे हैं
उस प्रलय दशा को देखा
जो चिर वंचित भूखे हैं।

आँसू

सूखी सरिता की शय्या
वसुधा की करुण कहानी
कूलों में लीन न देखी
क्या तुमने मेरी रानी ?

सूनी कुटिया कोने में
रजनी भर जलते जाना
लघु स्नेह भरे दीपक का
देखा है फिर बुझ जाना।

सबका निचोड़ लेकर तुम
सुख से सूखे जीवन में
बरसो प्रभात हिमकन-सा
आँसू इस विश्व-सदन में।